Asian Journal of Multidisciplinary Studies

ISSN: 2321-8819 (Online)
2348-7186 (Print)
Impact Factor: 1.498
Vol.4, Issue 9, August 2016

अम्बेडकर मार्ग : बुद्धिज़्म या कम्युनिज़्म

राजाराम
सी–17, विश्वविद्यालय केम्पस
डॉ. हरीसिंह गौर वि.वि. सागर

सारांषः मनुष्य मात्र की उन्नति के लिए धर्म की आवश्यकता है। मैं यह अच्छी तरह जानता हूँ कि कार्ल मार्क्स के सिद्धांतों से एक नया मत निकला है। उनके कथनानुसार धर्म में कुछ भी नहीं है। उनके लिए धर्म का कोई महत्व नहीं है। उनका धर्म केवल यह है कि उन्हें प्रातः काल मक्खन लगे हुए टोस्ट, दोपहर को खाने के लिए स्वादिष्ट भोजन, सोने के लिए अच्छा बिस्तरा और देखने के लिए सिनेमा चाहिए। यही उनका तत्वज्ञान है। मैं ऐसे तत्व ज्ञान का हामी नहीं हूँ। मेरे पिता की निर्धनता के कारण मुझे ऐसा कोई सुख नहीं मिला। अपने जीवन में जितना कष्ट मैंने सहन किया है उतना किसी ने सहन नहीं किया होगा। इसलिए गरीबों का जीवन किस प्रकार कष्टमय होता है, इसे मैं भली प्रकार से जानता हूँ। आर्थिक दृष्टिकोण को सामने रखकर हमारा आन्दोलन चलना चाहिए और मैं भी इस बात का विरोधी नहीं हूँ। हमारी आर्थिक उन्नति होनी चाहिए इसलिए मैं आज तक अपने लोगों की आर्थिक और मानसिक उन्नति के लिए संघर्ष करता रहा हूँ। यही नहीं बल्कि मानव–मात्र की आर्थिक उन्नति होनी चाहिए।[6]

की वर्ड – धर्म, अहिंसा, आत्मा, मुक्ति, नैतिकता, पुर्ननिर्माण, अष्टांगमार्ग, भ्रमातीत, कारणकार्य, सनातन, साम्यवाद, अनाषक्ति, शुद्धिकरण, अंतर्ज्ञान, निर्वाण, सुसंस्कृत,

बुद्ध का नाम सामान्तः अहिंसा के सिद्धान्त के साथ जोड़ा जाता है। अहिंसा को ही उनकी षिक्षाओं व उपदेषों का समस्त सार माना जाता है। उसे ही उनका प्रारंभ व अंत समझा जाता है। बहुत कम व्यक्ति इस बात को जानते हैं कि बुद्ध ने जो उपदेष दिए वे बहुत ही व्यापक है, अहिंसा से बहुत बढ़कर हैं। अतएव यह आवष्यक है कि उनके सिद्धान्तों पर विस्तारपूर्वक विचार किया जाए।

बौद्ध दर्शन के प्रमुख तत्व :

1. मुक्त समाज के लिए धर्म आवष्यक है।
2. प्रत्येक धर्म अंगीकार करने योग्य नहीं होता।
3. धर्म का सम्बन्ध जीवन के तथ्यों व वास्तविकताओं से होना चाहिए। ईष्वर या परमात्मा या स्वर्ग या पृथ्वी के सम्बन्ध में सिद्धान्तों तथा अनुमान मात्र की निराधार कल्पना से नहीं होना चाहिए।
4. ईष्वर को धर्म का केन्द्र बनाना अनुचित है।
5. आत्मा की मुक्ति या मोक्ष को धर्म का केन्द्र बनाना अनुचित है।
6. पशुबलि को धर्म का केन्द्र बनाना अनुचित है।
7. वास्तविक धर्म का वास मनुष्य के हृदय में होता है, शास्त्रों में नहीं।
8. धर्म के केन्द्र मनुष्य तथा नैतिकता होने चाहिए। यदि नहीं, तो धर्म एक क्रूर अंधविष्वास है।
9. नैतिकता के लिए जीवन का आदर्ष होना ही पर्याप्त नहीं है। चूंकि ईष्वर नही है, अतः इसे जीवन का नियम या कानून होना चाहिए।
10. धर्म का कार्य विष्व का पुननिर्माण करना तथा उसे प्रसन्न रखना है, उसकी उत्पत्ति या उसके अन्त की व्याख्या करना नहीं।
11. संसार में दुख स्वार्थों के टकराव के कारण होता है और इसके समाधान का एकमात्र तरीका अष्टांग मार्ग का अनुसरण करना है।
12. सम्पत्ति के निजी स्वामित्व से अधिकार व शक्ति एक वर्ग के हाथ में आ जाती है और दूसरे वर्ग को दुख मिलता है।
13. समाज के हित के लिए यह आवष्यक है कि इस दुख का निदान इसके कारण का निरोध करके किया जाए।
14. सभी मानव प्राणी समान हैं।
15. मनुष्य का मापदंड उसका गुण होता है, जन्म नहीं।
16. जो जीच महत्वपूर्ण है, वह है उच्च आदर्ष न कि उच्च कुल में जन्म।
17. सबके प्रति मैत्री का साहचर्य व भाईचारे का कभी की परित्याग नही करना चाहिए।
18. प्रत्येक व्यक्ति को विधा प्राप्त करने के का अधिकार है। मनुष्य को जीवित रहने के लिए ज्ञान विद्या की उतनी ही आवष्यकता है, जितनी भोजन की।
19. अच्छा आचरण विहीन ज्ञान खतरनाक होता है।
20. कोई भी चीज भ्रमातीत व अचूक नहीं होता। कोई भी चीज सर्वदा बाध्यकारी नहीं होती।

प्रत्येक वस्तु छानबीन तथा परीक्षा के अधीन होती है।

21. कोई वस्तु सुनिष्चित तथा अंतिम नहीं होती।

22. प्रत्येक वस्तु कारण–कार्य सम्बन्ध के नियम के अधीन होती है।

23. कोई भी वस्तु स्थायी या सनातन नहीं है। प्रत्येक वस्तु परिवर्तनषील होती है। सदैव वस्तुओं में होने का क्रम चलता रहता है।

24. युद्ध यदि सत्य तथा न्याय के लिए न हो, तो वह अनुचित है।

25. पराजित के प्रति विजेता के कर्त्तव्य होते हैं।[1]

बुद्ध के संक्षिप्त रूप में यही सिद्धान्त है।

कार्ल मार्क्स का मौलिक सिद्धान्त

अब हम कार्ल मार्क्स द्वारा मौलिक रूप से प्रस्तुत मूल सिद्धान्त का विवेचन करें। इसमें सन्देह नहीं कि मार्क्स आधुनिक समाजवाद या साम्यवाद का जनक है। परन्तु उसकी रूचि केवल समाजवाद के सिद्धान्त को प्रतिपादित व प्रस्तुत करने मात्र में ही नहीं थी। यह कार्य तो उससे बहुत पहले ही अन्य लोगों द्वारा कर दिया गया था। मार्क्स की अधिक रूचि इस बात को सिद्ध करने में थी कि उसका समाजवाद वैज्ञानिक है। उसका जिहाद पंजीपतियों के विरूद्ध जितना था, उतना ही उन लोगों के विरूद्ध भी था, जिन्हें वह स्वप्नदर्षी या अव्यावहारिक समाजवादी कहता था। वह उन दोनों को ही पसन्द नहीं करता था। इस बात पर इसलिए ध्यान देने की आवष्यकता है, क्योंकि मार्क्स अपने समाजवाद के वैज्ञानिक स्वरूप को सबसे अधिक महत्व देता था। जिन सिद्धान्तों को मार्क्स ने प्रस्तुत किया उनका उद्देष्य कुछ और नहीं केवल उसके इस दावे व विचारधारा को स्थापित करना था कि उसका समाजवाद वैज्ञानिक प्रकार का था, स्वप्नदर्षी व अव्यावहारिक नहीं।

वैज्ञानिक समाजवाद से कार्ल मार्क्स का यह अभिप्राय था कि उसका समाजवाद अपरिहार्य तथा अनिवार्य प्रकार का था और समाज उसकी ओर अग्रसर हो रहा है तथा उसकी गति को आगे बढ़ने से कोई चीज नहीं रोक सकती। मार्क्स के इस दावे व विचारधारा को सिद्ध करना है, जिसके लिए उसने मुख्य रूप से परिश्रम किया।

मार्क्स की अवधारणा के प्रमुख तत्व :

1. दर्षन का उद्देष्य विष्व का पुननिर्माण करना है, ब्रह्मंड की उत्पत्ति की व्याख्या करना नहीं।

2. जो शक्तियां इतिहास की दिषा को निष्चित करती हैं वे मुख्यतः आर्थिक होती है।

3. समाज दो वर्गो में विभक्त हैं–मालिक तथा मजदूर।

4. इन दोंनों वर्गो के बीच हमेषा संघर्ष चलता रहता है।

5. मजदूरों का मालिकों द्वारा शोषण किया जाता है। मालिक उस अतिरिक्त मूल्य का दुरूपयोग करते हैं, जो उन्हें अपने मजदूरों के परिश्रम के परिणामस्वरूप मिलता है।

6. उत्पाद के साधनों का राष्ट्रीकरण, अर्थात् व्यक्तिगत सम्पत्ति का उन्मूलन करके शोषण को समाप्त किया जा सकता है।

7. इस शोषण के फलस्वरूप श्रमिक और अधिकाधिक निर्बल व दरिद्र बनाए जा रहे हैं।

8. श्रमिकों की इस बढ़ती हुई दरिद्रता व निर्बलता के कारण श्रमिकों में क्रांतिकारी भावना उत्पन्न हो रही है और परस्पर विरोध वर्ग संघर्ष के रूप में बदल रहा है।

9. चूँकि श्रमिकों की संख्या स्वामियों की संख्या से अधिक है, अतः श्रमिकों द्वारा राज्य को हथियाना और अपना शासन स्थापित करना स्वाभाविक है। इसे उसने 'सर्वहारा वर्ग की तानाषाही' के नाम से घोषित किया है।

10. इन तत्वों का प्रतिरोध नहीं किया जा सकता है, इसलिए समाजवाद अपरिहार्य है।[2]

मार्क्सवादी सिद्धान्त को उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में जिस समय प्रस्तुत किया गया था, उसी समय से इसकी काफी आलोचना होती रही है। इस आलोचना के फलस्वरूप कार्ल मार्क्स द्वारा प्रस्तुत विचारधारा का काफी बड़ा ढांचा ध्वस्त हो चुका है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मार्क्स का यह दावा कि उसका समाजवाद अपरिहार्य है, पूर्णतया असत्य सिद्ध हो चुका है। सर्वहारा वर्ग की तानाषाही सर्वप्रथम 1917 में उसकी पुस्तक दास कैपिटल, समाजवाद का सिद्धान्त के प्रकाषित होने के लगभग सत्तर वर्ष के बाद सिर्फ एक देष में स्थापित हुई थी। यहां तक कि समाम्यवाद, जो कि सर्वहारा वर्ग की तानाषाही का दूसरा नाम है, रूस में आया तो यह किसी प्रकार से मानवीय प्रयास के बिना, किसी अपरिहार्य वस्तु के रूप में नहीं आया था। वहां एक क्रांति हुई थी और इसके रूस में आने से पहले भारी रक्तपात हुआ था तथा अत्याधिक हिंसा के साथ वहां सोद्देष्य योजना करनी पड़ी थी। शेष विष्व में अभी भी सर्वहारा वर्ग की तानाषाही के आने की प्रतीक्षा की जा रही है। मार्क्सवाद का कहना है कि समाजवाद अपरिहार्य है। उसके इस सिद्धान्त के झूठे पड़ जाने के अलावा सूचियों में वर्णित अन्य अनेक विचार भी तर्क तथा अनुभव, दोनों के द्वारा ध्वस्त हो गए हैं। अब कोई भी व्यक्ति इतिहास की आर्थिक व्याख्या को ही इतिहास की केवल एकमात्र परिभाषा स्वीकार नहीं करता। इस बात को कोई स्वीकार नहीं करता कि सर्वहारा वर्ग को उत्तरोत्तर कंगाल बनाया गया है और यही बात उसके अन्य तर्को के संबंध में भी सही है।

कार्ल मार्क्स के मत में जो बात बची रहती है, वह उस बची खुची आग की तरह है जो मात्रा में तो बहुत थोडी लेकिन बहुत ही महत्वपूर्ण होती है–अग्नि के एक पतंगे व अवषेष के समान है। बुद्धिज्म और कम्युनिज्म के प्रमुख रूप से चारों मत एक समान है।

1. दर्षन का कार्य विष्व का पुननिर्माण करना है, विष्व की उत्पत्ति का स्पष्टीकरण देने या समझाने में अपने समय को नष्ट नहीं करना ।

2. एक वर्ग का दूसरे वर्ग के साथ स्वार्थ व हित का टकराव व उनमें संघर्ष का होना है।

3. सम्पत्ति के व्यक्तिगत स्वामित्व से एक वर्ग को शक्ति प्राप्त होती है और दूसरे वर्ग को शोषण के द्वारा नुकसान पहुंचाया जाता है।

4. समाज की भलाई के लिए यह आवष्यक है कि व्यक्तिगत सम्पत्ति का उन्मूलन करके, दुख का निराकरण किया जाए।

बुद्ध तथा कार्ल मार्क्स के बीच तुलना

जो मार्क्सवादी सिद्धान्त अस्तित्व में है, उससे कुछ बातों को लेकर अब बुद्ध तथा कार्ल मार्क्स के बीच तुलना की जा सकती है।

पहली बात पर बुद्ध तथा कार्ल मार्क्स में पूर्ण सहमति है। उनमें कितनी अधिक सहमति है, इस बात को दर्षाने के लिए मैं नीचे बुद्ध तथा पोत्तपाद नामक ब्राह्माण के बीच हुए वार्तालाप के एक अंष को उद्धृत करता हूं –

इसके बाद उन्हीं शब्दों में पोत्तपाद ने बुद्ध से निम्नलिखित प्रष्न पूछे –

1. क्या संसार शाष्वत् नहीं है?
2. क्या संसार सीमित है ?
3. क्या संसार असीम है?
4. क्या आत्मा वैसी ही है, जैसा शरीर है?
5. क्या आत्मा एक वस्तु है और शरीर दूसरी?
6. क्या सत्य को पा लेने वाला व्यक्ति मृत्यु के बाद फिर जन्म लेता है?
7. क्या वह न तो पुनः जन्म लेता है न मृत्यु के बाद फिर रहता है? और प्रत्येक प्रष्न का बुद्ध ने एक ही उत्तर दिया, जो इस प्रकार था।
8. 'पोत्तपाद यह भी एक विषय है जिस पर मैंने कोई मत प्रकट नहीं किया है।'
9. परन्तु बुद्ध ने उस पर कोई मत प्रकट क्यों नहीं किया है?[3]

(क्योंकि) ये प्रष्न उपयोगी नहीं है। उनका सम्बन्ध धर्म से नहीं है, यह सही आचरण के लिए भी सहायक नहीं है न अनासक्ति न लालसा व लोभ से शुद्धिकरण न शांति, न हृदय की शांति, न वास्तविक ज्ञान, न अंतर्ज्ञान की उच्चतर अवस्था, न निर्वाण में सहायक है। अतएव यही कारण है कि मैं इसके सम्बन्ध में कोई विचार प्रस्तुत नहीं करता।

दूसरी बात के सम्बन्ध में मैं नीचे बुद्ध तथा कौषल नरेष प्रसेनजित के बीच हुए वार्तालाप से एक उदाहरण प्रस्तुत करता हूं –

''इसके अतिरिक्त राजाओं के बीच, कुलीनों के बीच, ब्राहाणों के बीच, गृहस्थों के बीच, माता तथा पुत्र के बीच, पुत्र तथा पिता के बीच, भाई तथा बहन के बीच, साथियों तथा साथियों के बीच सदा संघर्ष चलता रहा है।''

यद्यपि ये शब्द प्रसेनजित के हैं, परन्तु बुद्ध ने इस बात से इंकार नहीं किया कि यह समाज का सही चित्र प्रस्तुत करता है।

जहां तक वर्ग–संघर्ष के प्रति बुद्ध के दृष्टिकोण का सम्बन्ध है, अष्टांग मार्ग का उनका सिद्धांत इस बात को मान्यता देता है कि वर्ग संघर्ष का अस्तित्व है और यह वर्ग संघर्ष ही है जो दुख का दुर्दषा का कारण होता है।

तीसरे प्रष्न के सम्बन्ध में मैं बुद्ध तथा पोत्तपाद के वार्तालाप में से उक्त यह अंष उद्धत करता हूं –

''फिर वह क्या है जिसका आप महानुभाव ने निष्चय किया है''[4]

''पोत्तापाद मैंने यह स्पष्ट किया है कि दुख तथा कष्ट का अस्तित्व है। वे विद्यमान रहते हैं। मैंने यह समझाया है कि दुख का मूल व उत्पत्ति क्या है। मैंने यह भी स्पष्ट किया है कि दुख का अंत क्या है मैंने यह भी स्पष्ट किया है कि कौन सा तरीका जिसके द्वारा व्यक्ति दुख का अंत कर सकता है।

''और बुद्ध ने उसके सम्बन्ध में यह कथन क्यों किया?

''पोत्तापाद क्योंकि वह प्रष्न उपयोगी है, वह धर्म से संबंधित है, वह सही आचरण, अनासक्ति, लालसा व लोभ से त्राण हृदय की शांति वास्तविक ज्ञान पथ की उच्चतर अवस्था और निर्माण में सहायक है इसलिए पोत्तापाद यही कारण है कि कि मैंने उसके सम्बन्ध में कथन किया है।

यहां शब्द यद्यपि भिन्न है, परन्तु उनका अर्थ वही है। यदि हम यह समझ ले कि दुख का कारण शोषण है तब बुद्ध इस विषय में मार्क्स से दूर नहीं है। व्यक्तिगत संपत्ति के प्रष्न के संबंध में बुद्ध तथा आनंद के बीच वार्तालाप के निम्नलिखित उदाहरण से पर्याप्त सहायता मिलती है आनंद द्वारा पूछे गये एक प्रष्न का उत्तर देते हुए बुद्ध ने कहा –

''मैंने कहा कि धन लालुपता संपत्ति के स्वामित्व के कारण हेाती है यह ऐसा किस प्रकार है इस बात को आनंद इस प्रकार समझा जा सकता हैं। जहां पर किसी प्रकार की सम्पत्ति व अधिकार नहीं है वह चाहे किसी व्यक्ति के द्वारा या किसी भी वस्तु के लिए हो, वहां कोई सम्पत्ति या अधिकार न होने के कारण सम्पत्ति की समाप्ति या अधिकार की समाप्ति पर क्या कोई धनलोलुप या लालची दिखाई पडेगा?'

''नहीं प्रभु''।

''तब आनंद, स्वामित्व के आधार उसकी उत्पत्ति, दुराग्रह का प्रष्न ही कहां होता?''

मैंने कहा कि दुराग्रह स्वामित्व का मूल है। अब आनंद वह ऐसा किस प्रकार व क्यों हैं? इसे इस प्रकार समझना चाहिए। यदि किसी व्यक्ति में किसी वस्तु के संबंध में वहां चाहे जो हो, किसी प्रकार की कोई भी आसक्ति नही है, तो क्या ऐसा होने पर आसक्ति के अंत होने पर अधिकार या सम्पत्ति का आभास होगा?''

''नहीं होगा, प्रभु।''

चौथी बात के संबंध में किसी प्रमाण की आवष्यकता नहीं है। भिक्षु संघ के नियम इस विषय में सर्वोत्तम प्रणाम हैं। नियमों के अनुसार एक भिक्षु केवल निम्नलिखित आठ वस्तुओं को ही व्यक्तिगत सम्पत्ति के रूप में रख सकता है–

1. 2. 3, प्रतिदिन पहनने के लिए तीन वस्त्र (त्रिचीवर), (1. अन्तर वासक, अन्दर के वस्त्र, 2. उत्तरासंग, ऊपर के वस्त्र, 3. संघारी, शीत आदि से बचाव के लिये चादर)

4. कमर में बांधने के लिए एक पेटी (कटिबांधनी)

5. भिक्षापात्र,

6. एक उस्तरा (वाति),

7. सुई धागा

8. पानी साफ करने का कपड़ा या छन्ना (अलक्षाधक)।[5]

इसके अलावा एक भिक्षु के लिए सोने या चांदी को प्राप्त करना पूर्णतया निषिद्ध है, क्योंकि इससे यह आषंका होती है कि सोने या चांदी सें वह उन आठ वस्तुओं के अलावा, जिनको रखने की उसे अनुमति है कुछ और वस्तुएं भी खरीद सकता है।

ये नियम रूस में साम्यवाद में पाए जाने वाले नियमों से बहुत अधिक कठोर हैं।

मनुष्य मात्र की उन्नति के लिए धर्म की आवश्यकता है। मैं यह अच्छी तरह जानता हूँ कि कार्ल मार्क्स के सिद्धांतों से एक नया मत निकला है। उनके कथनानुसार धर्म में कुछ भी नहीं है। उनके लिए धर्म का कोई महत्व नहीं है। उनका धर्म केवल यह है कि उन्हें प्रातः काल मक्खन लगे हुए टोस्ट, दोपहर को खाने के लिए स्वादिष्ट भोजन, सोने के लिए अच्छा बिस्तरा और देखने के लिए सिनेमा चाहिए। यही उनका तत्वज्ञान है। मैं ऐसे तत्व ज्ञान का हामी नहीं हूँ। मेरे पिता की निर्धनता के कारण मुझे ऐसा कोई सुख नहीं मिला। अपने जीवन में जितना कष्ट मैंने सहन किया है उतना किसी ने सहन नहीं किया होगा। इसलिए गरीबों का जीवन किस प्रकार कष्टमय होता है, इसे मैं भली प्रकार से जानता हूँ। आर्थिक दृष्टिकोण को सामने रखकर हमारा आन्दोलन चलना चाहिए और मैं भी इस बात का विरोधी नहीं हूँ। हमारी आर्थिक उन्नति होनी चाहिए इसलिए मैं आज तक अपने लोगों की आर्थिक और मानसिक उन्नति के लिए संघर्ष करता रहा हूँ। यही नहीं बल्कि मानव–मात्र की आर्थिक उन्नति होनी चाहिए।[6]

पशुओं और मनुष्यों में बड़ा अन्तर है। पशुओं को रोज खाने के लिए चारा चाहिए किन्तु मनुष्य के लिए अन्न चाहिए। पशुओं को चारे के सिवा कुछ और चीज की आवश्यकता नहीं होती, परन्तु मनुष्य के शरीर के साथ मन भी है। इन दोनों बातों पर विचार करना चाहिए। मन का विकास होना जरूरी है। मन पवित्र और सुसंस्कृत बनाना भी जरूरी है, जिन देशों के लोग यह समझते हैं कि खाने–पीने का सुसंस्कृत मन के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है, ऐसे देश और वहाँ की जनता से संबंध रखना मेरे लिए लाभदायक नहीं होगा। जनता से संबंध रखते हुए इस बात का भी विचार करना चाहिए कि जिस प्रकार शरीर निरोगी होना चाहिए, उसी प्रकार शरीर को सुदृढ़ बनाने के लिए मन का भी सुसंस्कृत होना जरूरी है, अन्यथा यह कहना निरर्थक होगा कि मनुष्य उन्नति कर रहा है।

इससे स्पष्ट है कि डॉ. अम्बेडकर का मार्ग निश्चित ही बुद्ध मार्ग है। वे कुछ बातों पर मार्क्स से सहमति रखते हैं पर अन्ततः उनका मार्ग निश्चित ही भारतीय परिवेश के अनुसार चुना गया है।

संदर्भ सूची :

1. डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, ''भगवान बुद्ध या कार्ल मार्क्स'', पृष्ठ 6 एवं 7
2. डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, ''भगवान बुद्ध या कार्ल मार्क्स'', पृष्ठ 8
3. डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, अनुवादक – डॉ. भदन्त आनन्द कौसल्यायन, ''भगवान बुद्ध और उनका धर्म'', पृ. 186
4. डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, अनुवादक – डॉ. भदन्त आनन्द कौसल्यायन, ''भगवान बुद्ध और उनका धर्म'', पृ. 282
5. डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, अनुवादक – डॉ. भदन्त आनन्द कौसल्यायन, ''भगवान बुद्ध और उनका धर्म'', पृ. 334
6. नागपुर का धम्मोपदेश